International Journal of Advance and Applied Research
www.ijaar.co.in
ISSN – 2347-7075 Impact Factor – 7.328
Peer Reviewed Bi-Monthly
Vol.5 No. 19 May- June 2024

पुरातत्व के दृष्टिकोण से भारत का इतिहास

पप्पु कुमार
शोध छात्र, प्रा.भा. एवं ए. अध्ययन विभाग
मगध विश्वविद्यालय,बोधगया।
Email:-pappuswati896@gmail.com
Corresponding Author- पप्पु कुमार

शोध सारः–

पुरातत्व इतिहास के लिए मील का पत्थर के समान कार्य करता है। बिना इसके इतिहास की रचनात्मक मूल्यांकन किया जाना असंभव हैं। गर्त में छिपे पड़े इतिहास के उपर से पर्दा उठाने का कार्य पुरातत्व के बिना संभव नही हैं। इतिहास के इस अंग की खोज का श्रेय जेम्स प्रिंसेप महोदय ने 1837 ई0 मे की।

इतिहासकार बिना पुरातत्व विज्ञान के सहारा लिए किसी स्थल का प्रमाणिक इतिहास पेश नही कर सकते हैं। भारत में सर्वप्रथम ऐतिहासिक स्थलों एवं वस्तुओं को सुरक्षित रखने की प्रथा का आरंभ मुगल काल में आरंभ हुआ (1351–1388)। इस क्षेत्र में सर्वप्रथम पहल फिराजशाह तुगलक ने किया,उसका यह पहल खुद के सामग्री को सुरक्षित रखने के लिए किया गया था जिसे भविष्य काल में लोग जान सके। इसके पश्चात कुछ राजाओं ने समय– समय पर सम्राट अशोक के अभिलेखों–स्तंभ लेखों जैसी प्राचीन वस्तुओं को सुरक्षित रखने हेतु अपनी रूचि दिखायी।

प्रस्तावना–

प्रारंभ के समय मे इस विद्या का प्रयोग भारत में ब्रिटिश शासकों के द्धारा आरंभ किया। इस क्षेत्र में सबसे पहला कदम सर विलियम जोंस ने उठाया और 1784 ई. में एशियाटिक सोसाइटी औफ बंगाल की नींव रखी। इस संस्था के प्रादुभार्व का मुख्य उदेश्य शुरू में भाषा तथा साहित्य के क्षेत्र तक सिमित रहा,परन्तु इस्ट इंडिया कंपनी की स्थापना के पश्चात इस संस्था ने समस्त भारत का एक संक्षिप्त सर्वे रिपोर्ट पेश किया,इस रिपोर्ट के अनुसार डा0 बुकानन हेमिल्टन ने कार्य करना आरंभ किया। इन्होने मैसूर से इस कार्य का आरंभ किया जो धीरे–धीरे उतरी बंगाल से होते हुए बिहार तक पहुंच गया। इन विद्वानों ने भारत में अनेकों ऐसे ऐतिहासक स्थल ढूंढ निकाले जो इतिहास की पुराणता को प्रमाणित कर सकने से लिए पर्याप्त थे पर सबसे बड़ी बाधा इन ऐतिहासक स्थलों पर मिले पुरालेखों का अध्ययन के संबंध में था जो इस स्थल की विस्तृत जानकारी दे सकती थी। अजंता, एलोरा, एलीफेंटा तथा कन्हेरी की गुफाओं में लिखित लिपी को पढ़ पाना सबसे बड़ी समस्या उठ खड़ी हो गयी। इस तरह हम कह सकते है कि सामने हम किसी वस्तु को देख रहे है पर उसके बारे में हमें ठीक उस बंद पड़े पुस्तक के समान है कि उस पुस्तक में लिखा क्या है ६ इन सभी रहस्यों का समाधान 1837 ई. में जेम्स प्रिंसेप ने खोज निकाला। एशियाटिक सोसायटी के सचिव के पद पर रहते हुए भारत के विभिन्न क्षेत्रों की यात्रा की और लगभग 7–8 वर्षो से अथक प्रयास के बाद इन एकत्र किए गए अभिलेखों को धीरे–धीरे पढ़ने में सफलता प्राप्त की। यह उनका प्रथम प्रयास था जो अल्प था धिरे–धिरे अनवरत चलते इस प्रयास के कारण इसमें पूर्णता तब आयी जब इन्होने सांची स्तूप पर लिखें अभिलेखों को पढ़ने में सफलता प्राप्त की। इन अभिलेखें में एक बड़ा वर्णमाला दिया जो अभिलेखों को पढ़ने की एक कुंजी साबित हुई। इसकी विस्तृत व्याख्या उन्होने अपने शब्दों में की है जिसका संकलन द जनरल औफ एशियाटिक सोसायटी और बंगाल वाल्यूम टप् पेज नं0–460 मे है।

इसके पश्चात इतिहास के क्षेत्र में अभूतपूर्व बदलाव आया और यह जों कल्पना आधारित थी वैज्ञानिकतापूर्ण हो गया। जेंम्स प्रिंसेप ने इन वर्णमाला का प्रयोग करके बौद्ध सिक्कों, और बौद्ध अभिलेखों जिसमें सम्राट अशोक के लाट अभिलेख प्रमुख है पढ़ा और तदन्तर इसने दिल्ली और इलाहाबाद के अशोक स्तम्भों पर उत्कीर्ण अभिलेखों का विस्तृत पढ़ा। इस तरह हम कह सकते है ब्राह्मी लिपी को पढ़ने की एक कुंजी मिल गयी।

इतिहास के क्षेत्र की इस महान खोज ने इतिहास को एक नये युग में प्रवेश करा दिया,अब इतिहासकार दावे के साथ कालक्रम का निर्धारण कर सकते थें। अंवेषण और मूल्यांकन करने मे पुरातत्व की विद्या एक मील का पत्थर साबित हुई। इस विद्या का प्रयोग धीरे–धीरे श्री फर्गयूसन, अलेक्जेंडर कनिंघम, डा0 भाउदाजी, डा. राजेंद्र लाल इत्यादी विद्वानों ने किया।

अलेक्जेंडर कनिंघम ने 1861 ई. में आर्यकियोलौजिकल सर्वे औफ इंडिया की स्थापना की। तत्कालीन अंग्रेजी भारतीए सरकार ने सर अलेक्जेंडर कनिंघम को 1862 ई. मे भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण विभाग का सर्वेयर नियुक्त किया, लार्ड केनिन इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभाये उन्होने कहा की भारत के इतिहास को संजोने का दायित्व का निर्वहण वो सफलतापूर्वक करेगे और यह उनका कर्तव्य हैं। कनिंघम साहब ने सफलतापूर्वक अपने कार्य का निर्वहण करना आरंभ कियाऔर भारत के लगभग क्षेत्र को उन्होने स्पर्श करने का प्रयास किया उन्होने प्राचीन स्थलों का अंकन करना प्रारंभ किया एक नक्शा के माध्यम से इसें खुदायी के उपरांत उकेर कर सुरक्षित कर लिया गया। भारतीय सिक्कों के बारे में कनिंघम साहब ने काफी रूचि दिखायी और इसमें इनका ज्ञान अद्वितीय रहा, विशेषकर उतर पश्चिमी भाग पर इनका किया गया कार्य ऐसा है कि आज भी इतिहासकारों को इनके उपर ही आश्रित रहना पड़ता है। इन्होंने बोधगया, भरहूत, सांची,

सारनाथ में उत्खनन का कार्य कराया, उनके द्वारा कराया गया यह उत्खनन भले ही वैज्ञानिक पद्धति का अनुसरण करके नही कराया गया जिसका प्रमुख कारण रहा उस काल में पुरातत्व विज्ञान उतना विकसित नही था, वरन उनके किए गए इस कार्य को भुनाया नही जा सकता है। इन स्थलों के उत्खनन के उपरांत ही सबके समक्ष इसका सच सामने आया है।

कनिंघम साहब के 15 वर्षों के पश्चात भारत में इस क्षेत्र में पुनः कार्य आरंभ किए गए। इस समय भारत के वायसराय लार्ड कर्जन थे। इन्होने भारतीय पुरातत्व को एक नए युग का रास्ता दिखाया इन्होने पुरातत्व के क्षेत्र में शोध और साहित्य प्रकाशन पर विशेष जोर दिया इस क्षेत्र में कार्य करने वाले को पुरस्कृत करने की प्रथा का आरंभ कर दिया।लार्ड कर्जन ने भारत के अंदर छिपे विशाल इतिहास को देखा समझा और इसके उपरांत यह फैसला लिया कि इसकी सुरक्षा और सटीक विश्लेषण का जिम्मा अगर पुरातात्विक साक्ष्यों के आधार पर किया जाय तो आगामी आने वाले समय में यह लोगों के लिए प्रेरणा का कार्य करेगा। उन्होनें इस कार्य को एक कर्तव्य निर्वहन के तौर पर लिया और उसका भरपूर पालन भी किया। वायसराय लार्ड कर्जन ने पुरातत्व विभाग में एक केन्द्रिय विभाग की स्थापना की जिसके कारण यह कार्य नियमित और अच्छे ढंग से चलने लगा और समय समय पर इसमें उपलब्धियाँ हासिल होती रही। हालांकि समय हमेशा एक समान नही होता है,ऐसा नही है कि जिस स्थल की खुदाई की जा रही है उसमें आशातित सफलता मिलेगी ही,परन्तु धीरे–धीरे पुरातत्व वैज्ञानिकता के साथ निहित होकर इसमें शोध परक कार्य होने लगे।

लार्ड कर्जन द्वारा स्थापित विभाग में विद्वानों का जमावड़ा होने लगा इसमें कई मेधावी विद्वान कार्य किये। लोगो ने भारत की संस्कृति का ख्याल रखते हुए इसे सुशोभित किया। डा. वोगेल, डा. स्टीन, डा. व्लोच तथा डा. स्पूनर जैसे विद्वान लोग ने इस विभाग को सुशोभित किया। ये लोग पुरातत्व में विशेष रूचि रखते थें । इन सबों मे सबसे ज्यादा डा. मार्शल ने अपना योगदान दिया इसके लिए उन्हे सर की उपाधी मिली और इसके बाद जॉन की उपाधी मिली और ये सर जॉन मार्शल कहलाने लगें। इनकी नियुक्ति पुरातत्व विभाग के डायरेक्टर के पद पर की गयी । इनके मार्गदर्शन मे भारतीय पुरातत्व ने एक नयी उचांइयों को प्राप्त किया और भारतीय इतिहास को महत्वपुर्ण लाभ मिला। इस विभाग में यूरोपीय पुरातत्वशास्त्रियों के साथ भारतीय युवकों ने बढ़ चढ़ कर हिस्सा लिया जिसका उतसाहपूर्ण परिणाम मिला। सन् 1903–1912 ई0 के आसपास उत्खनन के क्षेत्र में अनेक कार्य सम्पन्न होने लगे सर्वप्रथम सांची का उत्खनन हुआ इसके पश्चात सारनाथ, कुशीनगर, और श्रावस्ती जैसे प्रसिद्ध बौद्ध स्थलों का उत्खनन हुआ। इन सभी स्थलों के सफलतम उत्खनन के उपरांत पुष्कलावती, भीट वैशाली और फिर मगध के राजगृह का उत्खनन कार्य शुरू किया गया । ये सभी नगर सांस्कृतिक रूप से महत्वपूर्ण थे जहाँ से बौद्ध धर्म का इतिहास सहजता से मिल जाता था। साहित्यिक रूप से चीनी यात्रियों के यात्रा वृतांतों में इन स्थलों का नाम प्रमुखता से लिया गया था तथा इसका बौद्धिक महत्व बहुत था और बौद्ध स्थलों की पहचान आसानी से हो जाती थी। सामान्यतया बौद्ध स्तूप के चारों और उचे–उचे टीले होते थे जिसे उसकी आकृति से आसानी से पहचान की जा सकती थी। इसका उत्खनन भी सरल होता था, इसकी बनाबट के अनुसार सरलता पूर्वक बिना किसी क्षति के ही वस्तुए की प्राप्ति हो जाती थी उदाहरणतः पेशावर के पास एक स्तूप में राजा कनिष्क ने भगवान बुद्ध के अवशेष रख दिए थे। सारनाथ से अशोक स्तंभ जिसकी आकृति सिंह वाली थी सहजता पूर्वक प्राप्त किया गया था।

सन 1912 ई. में तक्षशिला का उत्खनन का कार्य सर जॉन मार्शल ने स्वयं कराया था और यह कार्य लगभग दो दशाब्दियों तक चला। पाटलीपुत्र. का उत्खनन डा. स्पूनर ने कराया परन्तु यह कार्य इतने अधिक दिन चला कि विभाग इसका खर्च वहन करने से इंकार कर दिया तब रतन टाटा ने इसके समूचे खर्च का वहन स्वयं किया और उत्खनन का कार्य पुनः आरंभ किया गया। खुदाई के पश्चात इस नगर की प्राचीनता सामने आयी परन्तु जब इसके और नीचे जाने का प्रयास किया गया तो इसके ट्रेन्च में पानी आ गया जिसके कारण खुदायी रोक दी गयी। यद्यपि तक्षशिला की खुदाई से यह सच सामने आया कि यह नगर भारत के उत्तर पश्चिम में बसा एक नगर था जिसकी संस्कृति बाहर से आने वाले यात्रियों के कारण सम्मिश्रित थी। तक्षशिला का उत्खनन लगभग 25 वर्गमील के दायरे में अलग अलग स्थलों पर किया गया यहाँ से अनेक बौद्ध विहार होने के प्रमाण मिलें इस स्थल से मिले पुरातात्विक सामग्री भारतीय इतिहास के लिए अति महत्वपूर्ण है। यहां अशोक महान द्वारा धर्मराजिका स्तूप का निमाण कराया गया था जो अपनी भव्यता एवं विशालता के कारण सुप्रसिद्ध है। इसके आसपास और भी कई बौद्ध बिहार एवं मठों का निर्माण कराया गया था। इसके निकट पहाड़ियों पर बौद्ध भिक्षुओं का निवास स्थल होने का प्रमाण मिलता हैं।

इसके पश्चात नालंदा की खुदाई प्रारंभ की गयी परन्तु इसी बीच द्वितीय विश्वयुद्ध आरंभ होने से इसके लिए बाधा साबित हो गयी उस समय की अंग्रेजी सरकार सारा ध्यान युद्ध की तरफ लगा दिया और इस उत्खनन में राशि की बाध्यता सामने आ गयी फिर इस महान बौद्ध स्थल की खुदायी के लिए कुछ राशि लंदन की रॉयल एशियाटिक सोसाइटी ने उपलब्ध करायी। इस प्रकार डा. स्पूनर 1917 ई में अपना कार्य को जारी रखा और विश्व प्रसिद्ध नालंदा महाविहार की उत्खनन को अंजाम दिया लगभग दो दशक चले इस उत्खनन के पश्चात यह महान महाविहार सबके सामने आया। इस उत्खनन से इस महाविहार का सत्य सामने उभर कर सामने आया साथ ही एक ऐसा सच सामने आया जिसे समूचा विश्व आज भी स्वीकार करता है। यह महाविहार इतना विशाल था की इतना बडा उत्खनन से प्राप्त स्थल अभी तक नही प्राप्त किया जा सका है। इस उत्खनन से नालंदा महाविहार के स्तूप, मन्दिर, मठ और विहार सबके सामने आये साथ ही उत्कृष्ट रूप से उच्य श्रेणी की कलाकृतियाँ भी प्राप्त की गयी जिसमे कांसे से निर्मित एक नर्तकी की मूर्ति थी। यह महाविहार 7 बार बना या इसका पुननिर्माण हुआ इसके बनाबट से साफ स्पष्ट होता है।

भारतीय इतिहास में पुरातत्व की महत्व को देखते हुए भारत के अनेक राज्यों में इसके विभाग बनाये गये और उत्खनन का कार्य चलता रहा। भारत के उतर पश्चिम भाग में शहरे बहलोल, तख्ती बही, जमालगढ़ी जैसे महान बौद्ध स्थलों की खोज की गयी। पंजाब में हडप्पा और तक्षशिला महत्वपूर्ण है, कश्मीर में हिमयुग का अध्ययन सान घाटी का उद्योग, सतलज की घाटी में रोपड़ के समीप का उत्खनन, अम्बाला के निकटवर्ती टीलों का रूप सिन्धु घाटी संस्कृति

के विस्तार का संकेत कर रहे हैं। कश्मीर में 1922 ई. में पुरातत्व विभाग की स्थापना की गयी, यहाँ कल्हण की राजतरंगिणी इतिहास के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण उपलब्धि के रूप मे अपना स्थान रखती हैं। पुरातत्व की दृष्टिकोण से मथुरा, वाराणसी, श्रावस्ती, कौशाम्बी तथा अहिच्छत्र अपना विशेष महत्व रखता है। ये स्थान मानव के आदिम युग के उत्थान की दशा को प्रदर्शित करता हैं। पंजाब और बंगाल के विभिन्न भागों का उत्खनन कराया गया जिसमें शुंग काल, मौर्य काल , कुषाण काल, गुप्त काल के विभिन्न कलाकृतियों वाले मृदभांड के सौन्दर्य से परिपूर्ण है। इसके साथ सिक्कों तथा अभिलेख के संयोग से उस काल की तिथी का निर्धारण करने में अच्छी सहूलियत प्राप्त होती हैं बंगाल में सन 1933 ई. में विधान सभा द्वारा एक अधिनियम पारित कर इनकी सुरक्षा का प्रबंध किया गया ।

निष्कर्षः– पुरातत्व में उत्खनन महत्वपूर्ण स्थान रखता हैं। यह इतिहास की वास्तविकता को उजागर करने में सहायक होता है । पुरातत्व के विकास के उपरांत ही एक वैज्ञानिक इतिहास सबके समक्ष उपस्थित किया गया। भारतीए इतिहास में पुरातत्व ने अपना अच्छा स्थान प्राप्त किया है और इसके अंवेषणों ने इतिहास की वास्तविकता को उजागर करने में प्रमुख योगदान दिया हैं। यद्यपि इसमें नित्य नये–नये प्रयोग होते रहते है और इसमें नित्य वैज्ञानिक अंवेषण भी होते रहते है जिससे यह अपने पैनेपन को प्राप्त करता हैं। पुरातत्व को अगर प्रभावित करती है तो पुरातत्वशास्त्री की काबिलियत, यह किस प्रकार और कितनी सजगता से इस कार्य को करता है यह उस पर निर्भर करता है। जिस प्रकार कनिंघम के द्वारा कराये गये उत्खनन को आज के लोग वैज्ञानिकता से पूर्ण नही मानते है लोग का मत है कि अगर यह उत्खनन आज हुआ होता तो और भी सटीकता से इतिहास को उजागर करने का मौका मिलता और इससे प्राप्त वस्तुओं का अंकन वैज्ञानिकता पूर्ण किया जा सकता । भारत ऐसे विशाल और सांस्कृतिक संपन्न देश में पुरातत्व का भविष्य बहुत ही उज्जवल है और इसकी अनेक श्रेणीयां हो गयी हैं। इस कार्य के लिए केंद्र और राज्य सरकारों की सहभागिता का होना आवश्यक माना जाता है बिना इसके तालमेल के इसका परिणाम नही आ सकता हैं। सबसे जरूरी है उत्खनन के उपरांत उस स्थल के संरक्षण का जिसका अभी के समय में घोर अभाव है। उदाहरण के तौर पर नालंदा जिले के तेलहाड़ा महाविहार का उत्खनन बिहार पुरातत्व के सौजन्य से कराया गया और यहाँ से आशातीत सफलता प्राप्त होने के उपरांत भी इसकी संरक्षण के दिशा में कोई कदम नही उठाया गया फलस्वरूप यहाँ पर उत्खनित स्थल पर बड़े–बड़े जंगल पेंड़ उग आएं है। जिससे की इसकी दिवाल और ईट क्षतिग्रस्त हों रही। यह महाविहार नालंदा महाविहार से 400 वर्ष पूर्व बनी थी ऐसा इसके उत्खनन के उपरांत प्राप्त ईंट के साइज से पता चलता है, इस स्थल से अनेक मूर्ति,टेराकोटा मूर्ति, सिक्के, तथा मुहरे प्राप्त की गयी है। अतः भारतीए इतिहास को बेहतर तरीके से जानने के लिए पुरातत्व को जानना जरूरी हैं।

संदर्भ ग्रंथः–

1. ओझा,श्री कृष्ण–इतिहास और पुरातत्व,पेज–17
2. मजमूदार रमेश चंद्र, हिस्ट्र एंड कल्चर औफ द इंडियन पीपल भौल्यूम–1,पेज–65
3. प्रिंसेप जेंम्स, द जनरल औफ द एशियाटिक सोसायटी औफ बंगाल वौल्यूम ट्प पेज–460
4. अल्टेकर, द बर्थ औफ इंडियन सिविलाईजेशन।
5. व्हीलर, : इयरली इंडिया एंड पाकिस्तान।
6. बी.बी. लाल, इंडियन आर्कियोलौजी सिंस इंडिपेंडेन्स।
7. सांकलिया,एच.डी., इंडियन आर्कियोलौजी टुडे।
8. शास्त्री,के.एन., न्यू लाइट औन इंडस वैली सिविलाईजेशन।
9. पत्रिकाएंः–
10. इंडियन आर्कियोलौजी– ए रिव्यू।
11. एंशियंट इंडिया।